

[2023] 2 एस. सी. आर 20

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 2 एस सी आर।

ए.

निखिल चंद्र मंडल

बी.

पश्चिम बंगाल राज्य

(2010 की आपराधिक अपील संख्या 2269)

बी.

मार्च 03,2023

[बी. आर. गवई और संजय करोल, जे. जे.]

साक्ष्य-न्यायेतर स्वीकारोक्ति-गोपनीय मूल्य-महिला की हत्या धारदार हथियार से की गई पाई गई-अनुसंधान के दौरान, पता चला कि मृतक के अपीलार्थी-पति ने अभियोजन पक्ष के गवाह के सामने स्वीकार किया था कि उसने मृतक की हत्या उसी स्थान पर हत्या के हथियार से की थी जहाँ मृतक का शव मिला था-हालाँकि, निचली अदालत ने गवाहों के साक्ष्य को एक-दूसरे के विरोधाभासी और भरोसेमंद नहीं पाया, और अपीलार्थी को बरी कर दिया-अपील में, उच्च न्यायालय ने दोषी ठहराया और अपीलार्थी को यू/एस की सजा सुनाई। 302 - हस्तक्षेप-आयोजित:नहीं मांगा गया-हालांकि, मजबूत संदेह हो सकता है, यह उचित संदेह से परे सबूत की जगह नहीं ले सकता है-अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति सबूत का एक कमजोर टुकड़ा है-जहां एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी हुई है, इसकी विश्वसनीयता संदिग्ध हो जाती है और यह अपना महत्व खो देती है-निचली अदालत ने अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही को विश्वसनीय नहीं पाया ताकि केवल ऐसी गवाही के आधार पर दोषसिद्धि को आधार बनाया जा सके-निचली अदालत ने कपड़ों और हथियारों की बरामदगी पर अविश्वास किया-निचली अदालत द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कानून के अनुसार था-जब तक कि इस तरह का निष्कर्ष विकृत या अवैध/असंभव नहीं पाया जाता है, तब तक अपीलीय अदालत के लिए इसमें हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं है-निचली अदालत द्वारा लिया गया दृष्टिकोण दोनों में से किसी को भी विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता है। एस. 303.

सी.

डी.

ई.

एफ.

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

जी.

आयोजित किया गया:**1.1.**यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि संदेह कितना भी मजबूत हो, यह उचित संदेह से परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता है।इन मार्गदर्शक सिद्धांतों के आलोक में, हमें वर्तमान मामले पर विचार करना होगा।[पैरा **11**] [**26-सी-डी**]

एच.

20 ए.

निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए

1.2.निचली अदालत ने कहा कि जहां दोषसिद्धि पक्ष का मामला पूरी तरह से अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आधारित है और दोषसिद्धि पक्ष उस अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आरोपी को दोषी ठहराने की मांग करता है, तो जिन गवाहों के सामने कथित इकबालिया बयान दिया गया था, उनके साक्ष्य की विश्वसनीयता की परीक्षा पास करने के लिए अधिक जांच की आवश्यकता होती है।[पैरा **13**] [**26-ई**]

बी.

1.3 निचली अदालत ने पाया कि पीडब्लू **10** से **12** के साक्ष्य एक दूसरे के विरोधाभासी थे।निचली अदालत को इन गवाहों के व्यवहार को देखने का लाभ मिला।इसने इन गवाहों के साक्ष्य को भरोसेमंद नहीं पाया।[पैरा **14**] [**26-एफ**]

सी.

1.4 अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति सबूत का एक कमजोर टुकड़ा है।जहाँ एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी होती है, उसकी विश्वसनीयता संदिग्ध हो जाती है और यह अपना महत्व खो देती है।यह सावधानी का एक नियम है जहां अदालत आम तौर पर इस तरह के अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर कोई भरोसा रखने से पहले एक स्वतंत्र विश्वसनीय पुष्टि की तलाश करेगी।इसमें कोई संदेह नहीं है कि दोषसिद्धि अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आधारित हो सकती है, लेकिन चीजों की प्रकृति में, यह सबूत का एक कमजोर टुकड़ा है।[पैरा **15**] [**26-जी-एच; 27-ए**]

डी.

1.5 निचली अदालत ने पीडब्लू **10** से **12** की गवाही को विश्वसनीय नहीं पाया ताकि पूरी तरह से ऐसी गवाही के आधार पर दोषसिद्धि को आधार बनाया जा सके। जब तक इस तरह का निष्कर्ष विकृत नहीं पाया जाता, तब तक इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होगी।[पैरा **16**] [27-एफ-जी]

ई.

1.6 उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने खून से सने कपड़ों और उस हथियार की बरामदगी पर भरोसा किया है जिसका कथित रूप से अपीलार्थी द्वारा अपराध करने में उपयोग किया गया था। निचली अदालत ने दो आधारों पर कपड़े और हथियार की बरामदगी पर विश्वास नहीं किया। पहला, कि साक्ष्य अधिनियम, **1872** की धारा **27** के तहत अभियुक्त का कोई ज्ञापन बयान आवश्यक नहीं था और दूसरा, चाकू की बरामदगी एक खुली जगह से थी जो सभी के लिए सुलभ थी। निचली अदालत द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कानून के अनुसार था। हालाँकि, यह परिस्थिति जिसका उपयोग नहीं किया जा सकता था,

एफ.

जी.

एच.

22 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 2 एस. सी. आर.

उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति की पुष्टि करने के लिए नियुक्त किया गया था।[पारस **17,18**] [27-जी; 28-ए-बी]

1.7 बरी किए जाने के खिलाफ अपील में हस्तक्षेप का दायारा बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट है। जब तक ऐसा निष्कर्ष विकृत या अवैध/असंभव नहीं पाया जाता है, तब तक अपीलीय न्यायालय को इसमें हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं है। निचली अदालत द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को हस्तक्षेप के लिए विकृत या अवैध/असंभव नहीं कहा जा सकता है। उच्च न्यायालय ने निचली अदालत द्वारा पारित सुविचारित निर्णय और बरी करने के आदेश में हस्तक्षेप करने में घोर गलती की। इस प्रकार, उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता सी. की धारा **302** के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराते हुए पारित किए गए विवादित फैसले और आदेश को रद्द कर दिया जाता है।[पैरा **19,22**] [28-सी-एफ]

बी.

सी.

शरद बर्धीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य

(1984) 4 एससीसी 116:[1985] 1 एस. सी. आर. 88; सहदेवन और

एक अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य **(2012) 6 एस. सी. सी. 403:[2012] 4 एस. सी. आर. 366;** राजेश प्रसाद बनाम बिहार राज्य

डी.

और एक अन्य (2022) 3 एस. सी. सी. 471-संदर्भित।मामला कानून संदर्भ

[1985] 1 एससीआर 88

संदर्भित किया गया है

पैरा **8**

ई.

[2012] 4 एससीआर 366

संदर्भित किया गया है

पैरा **15**

(2022) 3 एस. सी. सी. 471

संदर्भित किया गया है

पैरा **20**

आपराधिक अपील न्यायनिर्णय:2010 की आपराधिक अपील सं. 2269।

एफ.

सरकार में कलकत्ता में उच्च न्यायालय के 15.12.2018 दिनांकित निर्णय और आदेश से।
1987 की अपील सं. 38।

सुश्री रुखसाना चौधरी, अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता।

जी.

सुश्री आस्था शर्मा, श्रीसत्य मोहंती, संजीव कौशिक, सुश्री मंटिका हरियानी, श्रेयस अवस्थी,
हिमांशु चक्रवर्ती, भानु मिश्रा, देवव्रत सिंह, सुश्री मुस्कान सुराना, अधिवक्ता।प्रत्यर्थी के लिए।

एच.

निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य ए

ए.

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

बी. आर. गवई, जे.

1. अपील में कलकत्ता में उच्च न्यायालय द्वारा 1987 की सरकारी अपील संख्या 38 में पारित 15 दिसंबर 2008 के फैसले और आदेश को चुनौती दी गई है, जिससे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, चौथे न्यायालय, बर्दवान (जिसे इसके बाद "निचली अदालत" के रूप में संदर्भित किया गया है) द्वारा पारित 31 मार्च 1987 के फैसले और आदेश को उलट दिया गया है, जिसके अनुसार निचली अदालत ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में, "आई. पी. सी.") की धारा 302 के तहत आरोप से बरी कर दिया था। विवादित निर्णय और आदेश के माध्यम से, उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता सी. की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया और उसे आजीवन कारावास और 2,000/- रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई और जुर्माने का भुगतान नहीं करने पर छह महीने की अवधि के लिए और कारावास की सजा सुनाई।

बी.

सी.

2. अभियोजन पक्ष का मामला, संक्षेप में, जैसा कि अभिलेख पर रखी गई सामग्री से एकत्र किया जा सकता है, इस प्रकार है:

डी.

11 मार्च 1983 को, यू. डी. केस नं. 7/83 पीएस केतुग्राम में दर्ज किया गया था कि लगभग 25 वर्ष की एक अज्ञात विवाहित महिला का शव अंबलगिसन रेलवे स्टेशन पर रेलवे ट्रैक के किनारे एक खेत में पड़ा हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि महिला की हत्या धारदार हथियार से की गई थी। उपरोक्त के आधार पर पुलिस ने अनुसंधान शुरू कर दी थी। अनुसंधान के दौरान, यह पता चला कि अपीलार्थी अपनी पत्नी (मृतक) और उनके बेटे के साथ लवपुर ग्राम पंचायत में आयोजित फुलारा मेले में भाग लेने गया था और उसके बाद, मृतक कथित रूप से उक्त मेले से लापता हो गया था। अनुसंधान के दौरान, यह भी पता चला कि अपीलार्थी ने माणिक पाल (पीडब्लू-10), प्रवत कुमार मिश्रा (पीडब्लू-11) और कनई सीएच के सामने कबूल किया था। साहा (पीडब्लू-12) ने कहा कि उसने उसी स्थान पर मृतक की हत्या भोजाली (हत्या के हथियार) से की थी जहां मृतक का शव मिला था। 3. अनुसंधान पूरा होने पर, अपीलार्थी के खिलाफ भारतीय दण्ड संहिता सी. की धारा 302 के तहत मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बर्दवान के समक्ष आरोप पत्र दायर किया गया। यह मामला सत्र न्यायालय को सौंपा गया था। अपीलार्थी ने दोषी नहीं होने का अनुरोध किया और मुकदमा चलाने का दावा किया।

मुकदमे के समापन पर, निचली अदालत ने 31 मार्च 1987 के फैसले और आदेश के माध्यम से अपीलार्थी को उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों से बरी कर दिया। इससे व्यथित होकर राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की। विवादित निर्णय और आदेश द्वारा,

ई.

एफ.

जी.

एच.

24

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 2 एस सी आर।

उच्च न्यायालय ने अपील को स्वीकार कर लिया और अपीलार्थी को दोषी ठहराया और उपरोक्त के अनुसार सजा सुनाई। इसलिए, वर्तमान अपील।

4. हमने अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री रुखसाना चौधरी और राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री आस्था शर्मा को सुना है।

बी.

5. सुश्री चौधरी प्रस्तुत करती हैं कि उच्च न्यायालय ने निचली अदालत द्वारा पारित सुविचारित निर्णय और बरी करने के आदेश को उलटने में घोर गलती की है। वह प्रस्तुत करती है कि निचली अदालत ने माणिक पाल (पीडब्लू-10), प्रवत कुमार मिश्रा (पीडब्लू-11) और कनई सीएच की गवाही पर सही ही विश्वास नहीं किया था। साहा (पीडब्लू-12) एक-दूसरे के साथ असंगत हैं। इसलिए यह प्रस्तुत किया जाता है कि इन तीन गवाहों के समक्ष कथित रूप से किए गए अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर विश्वास न करने वाले निचली अदालत के निष्कर्ष को विकृत या अवैध/असंभव नहीं कहा जा सकता है। वह आगे प्रस्तुत करती है कि किसी भी मामले में बरी होने के निष्कर्ष में हस्तक्षेप तब तक आवश्यक नहीं होगा जब तक कि निष्कर्ष विकृत या अवैध/असंभव नहीं पाया जाता है। इसलिए वह प्रस्तुत करती है कि विवादित निर्णय और आदेश को दरकिनार किया जा सकता है।

सी.

डी.

6. इसके विपरीत, सुश्री शर्मा प्रस्तुत करती हैं कि उच्च न्यायालय ने सही पाया है कि पीडब्लू 10 से 12 के समक्ष किया गया अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति विश्वसनीय, विश्वसनीय और

ठोस है। इसलिए वह प्रस्तुत करती है कि उच्च न्यायालय ने बरी करने के फैसले और आदेश को सही ढंग से उलट दिया है जो इन तीन गवाहों की ठोस और विश्वसनीय गवाही पर अविश्वास करते हुए दर्ज किया गया था। वह आगे प्रस्तुत करती है कि, अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति के अलावा, अभियोजन पक्ष ने खून से सने कपड़ों और अपराध करने में अपीलार्थी द्वारा उपयोग किए गए हथियार की बरामदगी भी साबित की है। यह परिस्थिति पीडब्लू 10 से 12 की गवाही की पुष्टि करती है।

ई.

एफ.

7. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की सहायता से, हमने पूरे साक्ष्य की जांच की है।

8. निर्विवाद रूप से, वर्तमान मामला परिस्थितिजनक साक्ष्य पर आधारित है। शरद के मामले में इस अदालत के फैसले में परिस्थिति साक्ष्य के मामले में दोषसिद्धि के संबंध में कानून बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट है।

जी.

बर्डहिचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य **1.**

9. हम लाभप्रद रूप से निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख कर सकते हैं

शरद बर्डहिचंद सारदा (ऊपर) के मामले में न्यायालय:

1 (1984) 4 एससीसी 116 ए

एच.

निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [बी. आर. गवई, जे.] ए.

“153. इस निर्णय के गहन विश्लेषण से पता चलेगा कि किसी अभियुक्त के खिलाफ मामले को पूरी तरह से स्थापित होने से पहले निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए:

(1) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से साबित किया जाना चाहिए।

बी.

यहाँ यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस न्यायालय ने संकेत दिया कि संबंधित परिस्थितियाँ "होनी चाहिए या होनी चाहिए" और "नहीं" साबित की जा सकती हैं। जैसा कि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1973) 2 एस. सी. सी.

793 में कहा था, "साबित किया जा सकता है" और "होना चाहिए या साबित किया जाना चाहिए" के बीच केवल एक व्याकरणिक ही नहीं बल्कि एक कानूनी अंतर भी है। 1973 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 1033:1973 सी. आर. एल. एल. जे. 1783] जहाँ अवलोकन किए गए थे: [एससीसी पैरा 19, पी. 807: एस. सी. सी. (सी. आर. आई) पी. 1047]

सी.

"निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को अदालत द्वारा दोषी ठहराए जाने से पहले दोषी होना चाहिए और न कि केवल दोषी होना चाहिए और 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच की मानसिक दूरी लंबी है और कुछ निष्कर्षों से अस्पष्ट अनुमानों को विभाजित करती है।"

डी.

(2) इस प्रकार साबित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात् वे किसी अन्य परिकल्पना पर समझाने योग्य नहीं होने चाहिए सिवाय इसके कि अभियुक्त दोषी है।

ई.

(3) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए,

(4) उन्हें साबित की जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभावित परिकल्पना को बाहर करना चाहिए, और

एफ.

(5) साक्ष्य की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूर्ण हो कि अभियुक्त की बेगुनाही के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में यह कार्य अभियुक्त द्वारा किया गया होगा।

154. ये पाँच सुनहरे सिद्धांत, यदि हम ऐसा कहें, तो परिस्थितिजनक साक्ष्य के आधार पर मामले के प्रमाण का पंचशील बनाते हैं।"

जी.

10. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से साबित किया जाना चाहिए। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संबंधित परिस्थितियाँ आवश्यक या अनिवार्य हैं।

एच.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

"होना चाहिए" और "नहीं" साबित किया जा सकता है। यह माना गया है कि न केवल एक व्याकरणिक है, बल्कि "साबित किया जा सकता है" और "होना चाहिए या साबित किया जाना चाहिए" के बीच एक कानूनी अंतर है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस प्रकार साबित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात्, वे किसी अन्य परिकल्पना पर समझाने योग्य नहीं होने चाहिए सिवाय इसके कि अभियुक्त दोषी है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि परिस्थितियाँ एक निर्णायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए और उन्हें साबित करने के लिए मांगी गई परिकल्पना को छोड़कर हर संभव परिकल्पना को बाहर करना चाहिए, और सबूतों की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूरी हो कि आरोपी की निर्दोषता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में कार्य आरोपी द्वारा किया गया होगा।

बी.

सी.

11. यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि संदेह कितना भी मजबूत हो, यह उचित संदेह से परे सबूत का स्थान नहीं ले सकता है। इन मार्गदर्शक सिद्धांतों के आलोक में, हमें वर्तमान मामले पर विचार करना होगा।

डी.

12. अभियोजन पक्ष का मामला मूल रूप से अतिरिक्त न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आधारित है जो अपीलार्थी द्वारा माणिक पाल (पीडब्लू-10), प्रवत कुमार मिश्रा (पीडब्लू-11) और कनई सीएच के समक्ष कथित रूप से किया गया था। साहा (पीडब्लू -12).

13. निचली अदालत ने कहा कि जहां दोषसिद्धि पक्ष का मामला पूरी तरह से अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आधारित है और दोषसिद्धि पक्ष उस अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर आरोपी को दोषी ठहराने की मांग करता है, तो जिन गवाहों के सामने कथित इकबालिया बयान दिया गया था, उनके साक्ष्य की विश्वसनीयता की परीक्षा पास करने के लिए अधिक जांच की आवश्यकता होती है।

ई.

14. निचली अदालत ने पाया कि पीडब्लू 10 से 12 के साक्ष्य एक दूसरे के विरोधाभासी थे। यह भी ध्यान देने योग्य है कि निचली अदालत को इन गवाहों के आचरण को देखने का लाभ मिला था। इसने इन गवाहों के साक्ष्य को विश्वसनीय नहीं पाया।

एफ.

15. यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति सबूत का एक कमजोर टुकड़ा है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति संदिग्ध परिस्थितियों से घिरी होती है, उसकी विश्वसनीयता संदिग्ध हो जाती है और यह अपना महत्व खो देती है। यह आगे कहा गया है कि यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि यह सावधानी का एक नियम है जहां अदालत आम तौर पर इस तरह के अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर कोई भरोसा करने से पहले एक स्वतंत्र विश्वसनीय पुष्टि की तलाश करेगी। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि दोषसिद्धि न्यायेतर स्वीकारोक्ति पर आधारित हो सकती है, ए

जी.

एच.

निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [बी. आर. गवई, जे.] ए.

लेकिन चीजों की प्रकृति में, यह सबूत का एक कमजोर टुकड़ा है। इस संबंध में मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया जा सकता है।

सहदेवन और एक अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य **2.** इस न्यायालय में

उक्त मामले ने इस मुद्दे पर पहले के विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करने के बाद इस प्रकार टिप्पणी की:

“16. इस न्यायालय के बहिष्कृत निर्णयों के उचित विश्लेषण पर, उन सिद्धांतों को बताना उचित होगा जो एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति को एक अभियुक्त की दोषसिद्धि का आधार बनाने में सक्षम सबूत का एक स्वीकार्य टुकड़ा बना देंगे। ये उपदेश उन मामलों की सच्चाई से निपटने के दौरान न्यायिक दिमाग का मार्गदर्शन करेंगे जहां अभियोजन पक्ष अभियुक्त द्वारा कथित रूप से किए गए अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर बहुत अधिक निर्भर करता है: (i) न्यायेतर स्वीकारोक्ति अपने आप में एक कमजोर सबूत है। अदालत द्वारा इसकी अधिक सावधानी और सावधानी के साथ जांच की जानी चाहिए।

बी.

सी.

(ii) यह स्वेच्छा से किया जाना चाहिए और सच्चा होना चाहिए। (iii) इससे आत्मविश्वास पैदा होना चाहिए।

डी.

(iv) एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति अधिक विश्वसनीयता और साक्ष्य मूल्य प्राप्त करती है यदि यह ठोस परिस्थितियों की एक श्रृंखला द्वारा समर्थित है और अन्य अभियोजन साक्ष्य द्वारा इसकी पुष्टि की जाती है।

ई.

(v) एक अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति को दोषसिद्धि का आधार बनाने के लिए, इसे किसी भी भौतिक विसंगतियों और अंतर्निहित असंभवताओं से ग्रस्त नहीं होना चाहिए।

(vi) इस तरह के कथन को अनिवार्य रूप से किसी भी अन्य तथ्य की तरह और कानून के अनुसार साबित करना होगा।”

एफ.

16. जैसा कि पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, निचली अदालत ने पीडब्लू 10 से 12 की गवाही को विश्वसनीय नहीं पाया ताकि पूरी तरह से ऐसी गवाही के आधार पर दोषसिद्धि को आधार बनाया जा सके। जब तक इस तरह का निष्कर्ष विकृत नहीं पाया जाता, तब तक इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होगी।

जी.

17. उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने खून से सने कपड़ों और उस हथियार की बरामदगी पर भरोसा किया है जिसका कथित रूप से अपीलार्थी द्वारा अपराध करने में उपयोग किया गया था।

2 (2012) 6 एस. सी. सी. 403

एच.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 2 एस सी आर।

18. निचली अदालत ने दो आधारों पर कपड़े और हथियार की बरामदगी पर विश्वास नहीं किया। पहला, कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 के तहत अभियुक्त का कोई ज्ञापन बयान आवश्यक नहीं था और दूसरा, चाकू की बरामदगी एक खुली जगह से थी जो सभी के लिए सुलभ थी। हम पाते हैं कि निचली अदालत द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कानून के अनुसार था। हालाँकि, इस परिस्थिति का, जो हमारे विचार में, उपयोग नहीं किया जा सकता था, उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति की पुष्टि करने के लिए नियोजित किया गया है।

बी.

19. बरी किए जाने के खिलाफ अपील में हस्तक्षेप का दायरा बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट है। जब तक ऐसा निष्कर्ष विकृत या अवैध/असंभव नहीं पाया जाता है, तब तक अपीलीय न्यायालय को इसमें हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं है।

सी.

20. हाल ही में, के मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ

राजेश प्रसाद बनाम बिहार राज्य और अन्य **3** ने विभिन्न विषयों पर विचार किया है।

बरी किए जाने के मामले में हस्तक्षेप के दायरे पर पूर्व निर्णय। इसने अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्त के पक्ष में दोहरी धारणा है। सबसे पहले, निर्दोषता का अनुमान जो आपराधिक न्यायशास्त्र के मौलिक सिद्धांत के तहत उसके लिए उपलब्ध है कि प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह किसी सक्षम अदालत द्वारा दोषी साबित न हो जाए। दूसरा, अभियुक्त द्वारा बरी किए जाने के बाद, उसकी बेगुनाही की धारणा को अदालत द्वारा और मजबूत, फिर से पुष्टि और मजबूत किया जाता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि अभिलेख पर साक्ष्य के आधार पर दो उचित निष्कर्ष संभव हैं, तो अपीलीय न्यायालय को निचली अदालत द्वारा दर्ज किए गए बरी किए जाने के निष्कर्ष को बाधित नहीं करना चाहिए। 21. हम पाते हैं कि निचली अदालत द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को हस्तक्षेप के लिए विकृत या अवैध/असंभव नहीं कहा जा सकता है। उच्च न्यायालय ने निचली अदालत द्वारा पारित सुविचारित निर्णय और बरी करने के आदेश में हस्तक्षेप करने में घोर गलती की है।

डी.

ई.

एफ.

22. परिणाम में, हम निम्नलिखित क्रम पारित करते हैं: ((i) अपील की अनुमति है;

((ii) कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा 1987 की सरकारी अपील संख्या 38 में अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता सी. की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराते हुए 15 दिसंबर 2008 को पारित किए गए विवादित फैसले और आदेश को रद्द कर दिया गया है। और

जी.

3 (2022) 3 एससीसी 471 ए

एच.

निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [बी. आर. गवई, जे.]

(iii) निचली अदालत द्वारा अपीलार्थी को उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों से बरी करते हुए 31 मार्च 1987 को पारित किए गए फैसले और आदेश की पुष्टि की जाती है।

23. अपीलार्थी को निर्देश दिया जाता है कि यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो तो उसे तुरंत रिहा कर दिया जाए।

बी.

24. लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का निपटारा कर दिया जाएगा।

निधि जैन

अपील की अनुमति दी गई।

(सहायक: तमन्ना, एलसीआरए)

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.